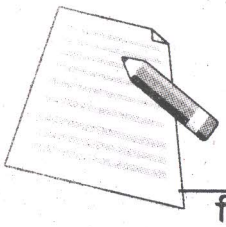

टिप्पणी

29

समकालीन विश्व व्यवस्था

आज विश्व में लगभग 200 राष्ट्र हैं, जिन्हें अलग-अलग देश के नाम से जाना जाता है। वे आपस में कई मायनों में समान हैं। प्रत्येक देश स्वतंत्र होता है, उसकी अपनी सरकार होती है जो अपनी सेना के द्वारा विदेशी हमलावरों से देश की रक्षा करते हैं। परंतु साथ ही ये देश भौगोलिक आकार, जनसंख्या, प्राकृतिक, संसाधनों, आर्थिक स्थितियों और सरकार के स्वरूप आदि में भिन्नता लिए होते हैं। तथापि कोई भी देश-कमजोर या शक्तिशाली, छोटा या बड़ा, अपने दायित्व का वहन अकेले नहीं कर सकता। उन्हें एक-दूसरे के साथ मिलकर रहने और आपसी लाभों के लिए कार्य करने की आवश्यकता होती है।

यद्यपि विश्व मामले का अर्थ सभी राज्यों के आपस में संबंध से है परंतु यह केवल राज्यों तक ही सीमित नहीं है। आम व्यक्तियों के बीच पर्यटक, पत्रकार, उद्यमी, खिलाड़ी आदि के रूप में संपर्क और सहयोग का तेजी से विकास हो रहा है। सैटेलाईट तकनीक और मोबाइल के प्रयोग से सुदूर देशों में बैठे लोगों के बीच बात करना सरल हो गया है। यही नहीं, केवल टेलीविज़न के माध्यम से खेलों, राजनैतिक और सांस्कृतिक घटनाओं, यहां तक कि युद्ध तक का भी सीधा प्रसारण हम अपने घर में बैठकर देख सकते हैं। इन सभी विकासों ने संसार को एक गांव के रूप में परिवर्तित कर दिया है। अत: विश्व में घटित हो रही घटनाओं के बारे में जानना हमारे लिए आवश्यक हो गया है। इसमें निश्चित रूप से हमें अपने संसार और उसकी समस्याओं के बारे में जानकारी करना आवश्यक है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप :

- विश्व व्यवस्था का अर्थ जान सकेंगे;
- शीत युद्ध के वर्षों में द्विध्रुवीय विश्व की कार्यप्रणाली को समझ सकेंगे;
- बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था की उत्पत्ति की व्याख्या कर सकेंगे;
- यह पहचानना कि शीत युद्ध के बाद विश्व व्यवस्था एक ध्रुवीय हो गई है;

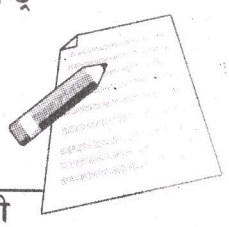

- समकालीन विश्व में युद्ध, हिंसा और आतंकवाद के कारण मानव द्वारा सहे गए कष्ट को स्पष्ट कर सकेंगे;
- वैश्वीकरण का अर्थ और इसके घटक को समझ सकेंगे; तथा
- समकालीन विश्व व्यवस्था में धनी और निर्धन राष्ट्रों के बीच बढ़ती आर्थिक असमानता की व्याख्या कर सकेंगे।

29.1 विश्व व्यवस्था का अर्थ

'क्रम' या व्यवस्था से सभी वस्तुओं के उनके उचित स्थान पर होने का संकेत मिलता है। यह नियमों को लागू करने और उनका सम्मान करने को भी दर्शाता है। यदि व्यवस्था सुदृढ़ हो तो दैनिक क्रियाकलाप शांतिपूर्ण और सामान्य होंगे। पर विश्व व्यवस्था में एक देश का अपने मामलों को दूसरे देशों के साथ संचालिन करने का तरीका प्राप्त होता है। यह तरीका नियमों और सिद्धांतों के रूप में हो सकता है जो सरकारों द्वारा स्वीकृत और सम्मानित होता है। इन नियमों में शामिल हैं-सभी राष्ट्रों की समानता, किसी राष्ट्र को अन्य राष्ट्र के आतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना, द्विपक्षीय संबंधों में शक्ति का प्रयोग न किया जाना और न ही उसके प्रयोग की चेतावनी देना, युद्धबंदियों के साथ मानवोचित व्यवहार किया जाना आदि। राष्ट्रों में इन नियमों को लागू करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ जैसी संस्था की स्थापना की गई है। इसका उद्देश्य राष्ट्रों के बीच वार्ता और राजनीति द्वारा उनके बीच अंतरों और समस्याओं को हल करने में सहायता देना है।

इस वास्तविकताओं के विपरीत 'विश्व व्यवस्था' शब्द विचित्र जान पड़ सकता है। यद्यपि औपचारिक रूप से राष्ट्र समान माने जाते हैं, परंतु उनके बीच स्पष्ट असमानता होती है। इनमें से कुछ असमानताएं इस रूप में देखी जाती हैं कि संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद में निषेधाधिकार (वीटो) केवल पाँच ही देशों को दी दिया गया। संसाधनों और अपना प्रभुत्व बढ़ाने के लिए सभी देश परस्पर स्पर्धा करते हैं। वे एक-दूसरे की नियती और महत्त्वाकांक्षा पर संदेह करते हैं। वे सीमा, व्यापार और अन्य मामलों के कारण झगड़ते हैं। वास्तव में इस समय भी विश्व में एशिया, अफ्रीका और यूरोप में दर्जनों युद्ध चल रहे हैं जो लाखों लोगों की मौत और बहुमूल्य सम्पत्ति का विनाश करते हैं। अनेक देशों में गृह युद्ध चल रहे हैं। ये गृह युद्ध देश की सेना और एक समुदाय के बीच का लंबा संघर्ष है ताकि वहां की सरकार को अपदस्थ किया जा सके या अलग स्वतंत्र राष्ट्र स्थापित कर लिया जाए। श्रीलंका इसका एक उदाहरण है। इसी से आतंकवाद भी जुड़ा हुआ है जो आम जनता में हिंसा और नृशंसतापूर्वक हत्याओं का डर पैदा करता है। इसके अलावा वाणिज्यिक और सामाजिक दवाब वाले समुदाय भी राज्य नीतियों से बड़ी-बड़ी मांगे करते हैं।

अमेरिका और यूरोप की बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ इतनी शक्तिशाली हो गई हैं जो कुछ निर्धन देशों में वहाँ की आर्थिक नीतियों के निर्धारण में हस्तक्षेप करती हैं। व्यापारिक गैर-सरकारी संगठनों का भी उन नीतियों पर प्रभाव बढ़ता जा रहा है।

बहुराष्ट्रीय कंपनियां वे व्यापारिक कंपनियां हैं जो मुख्यत: अमेरिका और यूरोप की हैं। उन्होंने अपने उपभोक्ता सामानों, दवाओं आदि के व्यापार को विश्व के अन्य भागों में फैलाया है। आप कोक, माइक्रोसॉफ्ट, जनरल मोटर्स आदि से परिचित होंगे। उन्हें बहुत अधिक मुनाफा होता है। कुछ बहुराष्ट्रीय कंपनियों की वार्षिक आय, अनेक अल्प विकसित राष्ट्रों से अधिक होता है। गैर-सरकारी संस्थाएं वे हैं जो व्यक्ति विशेष द्वारा उनकी व्यक्तिगत क्षमता के अनुसार सरकार के सीधे हस्तक्षेप के बिना स्थापित की जाती हैं। वाय. एम.सी.ए. रोटरी इंटरनेशनल, रैडक्रास आदि कुछ ऐसे गैर-सरकारी संगठनों के उदाहरण हैं जो स्थानीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय हैं। ये वातावरण सुरक्षा, विकास और मानव अधिकार आदि क्षेत्रों में सक्रिय हैं।

वास्तव में आप आश्चर्यचकित हो सकते हैं कि विश्व व्यवस्था को वर्तमान परिस्थिति में कैसे वर्णित किया

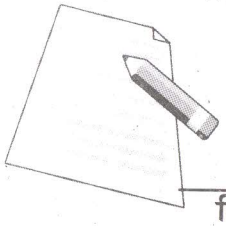

टिप्पणी

जा सकता है। निस्संदेह बहुत कुछ असंतोषजनक है, परंतु यह भी सत्य है कि विश्व के मामलों में बहुत कुछ व्यवस्थित है जो कि आसानी से ध्यान में नहीं आता। उदाहरण के लिए, राजनायिकों का आदान-प्रदान, युद्ध संबंधी नियम ,पत्र व्यवहार, वायु और समुद्री यातायात, विदेशियों से व्यवहार तथा मुद्रा विनिमय। सभी अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के उदाहरण हैं। अंतर्राष्ट्रीय मामलों के इन पहलुओं को प्रथा और परम्परा के द्वारा तथा विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय समझोतों और संधियों के नियमों द्वारा निर्धारित किया जाता है। सामान्यत: यह भी देखा जाता है कि जिन राष्ट्रों के बीच विवाद होता है, वे किसी समझौते पर पहुंचने के लिए किसी दूसरे देश या किसी अंतर्राष्ट्रीय एजेन्सी की सहायता लेते हैं। भारत और पाकिस्तान के बीच चल रही वार्ता प्रक्रिया इसी विश्व व्यवस्था का द्योतक है। 1945 के बाद विश्व युद्ध का न होना विश्व व्यवस्था के सकारात्मक पहलू को दर्शाता है।

हमें यहां यह जानना चाहिए कि वास्तविकताओं को पूर्ण रूप से उपेक्षित करके आदर्श विश्व व्यवस्था प्राप्त नहीं की जा सकती। राजनीतिक और अन्य परिस्थितियाँ या विश्व व्यवस्था को सदैव प्रभावित करती रही हैं। इन घटनाओं के संदर्भ में आवश्यक समायोजन करती हुई विश्व-व्यवस्था बनती जाती है। यह व्यवस्था किसी नई व्यवस्था को स्थान देने के लिए पूर्ण रूप से समाप्त नहीं की जाती; इसमें संसार की वास्तविकता के आधार पर केवल कुछ परिवर्तन किए जाते हैं। ये परिवर्तन अच्छे या बुरे, छोटे या बड़े हो सकते हैं। दूसरे शब्दों में, शीत युद्ध जैसी बड़ी घटनाओं के अंत के लिए व्यवस्था में परिवर्तन किया गया न की उस समय अस्तित्व में व्यवस्था को पूर्ण रूप से बदला गया।

पाठगत प्रश्न 29.1

(क) विश्व मामलों में मुख्य भूमिका निभाने वाले घटक कौन से हैं?

(ख) क्या सभी राष्ट्र आकार और शक्ति में समान हैं?

29.2 शीत युद्ध के समय द्विध्रुवीय व्यवस्था

जैसा कि आप जानते हैं कि द्वितीय विश्व युद्ध तक यूरोप विश्व व्यवस्था का रंगमंच बना रहा। यूरोपीय देशों ने आपस में गुट बनाकर यह सुनिश्चित किया कि कोई भी अकेला देश (जैसे कि फ्रांस, ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी आदि) संसार पर अपना प्रभुत्व स्थापित न कर सके। इस प्रकार उत्पन्न इस व्यवस्था को **शक्ति का संतुलन** कहते हैं। ब्रिटेन में इस नीति का बहुत लंबे समय तक पालन किया। परंतु यह तरीका प्रथम विश्व युद्ध के साथ ही बीसवीं सदीं के प्रारम्भ में विफल हो गया। इसी बीच यूरोप से बाहर के उभरते हुए देशों जैसे-अमेरिका और जापान ने विश्व राजनीति की प्रकृति और कार्य क्षेत्र का प्रसार किया।

ग्रेट ब्रिटेन, सोवियत रूस और अमेरिकी गुट के हाथों जर्मनी, जापान और इटली की हार के बाद द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हो गया। युद्ध के अंतिम चरण में अमेरिका ने जापान के हिरोशिमा और नागासाकी शहरों पर नाभिकीय बम गिराए। इस युद्ध ने दीर्घकालिक प्रभाव छोड़े, संयुक्त राज्य अमेरिका अपनी आर्थिक संपन्नता और सैन्य शक्ति के कारण नि:संदेह इस युद्ध में विजय का श्रेय लेने वाला बना। यह भी महसूस किया जाने लगा कि युद्ध के बाद भी अमेरिका की सैन्य शक्ति और नेतृत्व की विश्व में शांति कायम रखने की आवश्यकता होगी। इसमें आश्चर्य नहीं है कि ब्रिटेन, फ्रांस और दूसरे यूरोपियन देश आर्थिक भरपाई और सैन्य सुरक्षा के लिए अमेरिका पर निर्भर हो गए। युद्ध में विजय के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान देने के कारण सोवियत रूस को भी कम नहीं आंका जा सकता। यह देश भी यूरोपीय मामलों में समान दावेदारी किया।

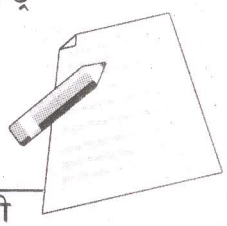

टिप्पणी

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अमेरिका और सोवियत संघ के बीच यूरोप की शांति और स्थायित्व के मसले पर जोरदार मतभेद पैदा हो गया। इसके कारण राजनैतिक और सैद्धांतिक थे। अमेरिका ने सरकार के प्रारूप के लिए प्रजातंत्र और मुक्त व्यापार को बढ़ावा देने पर जोर दिया। दूसरी ओर, सोवियत संघ ने साम्यवादी एक दलीय शासन और राज्य नियंत्रित अर्थव्यवस्था में विश्वास किया और उस पर बल दिया। इन अंतरों के कारण एक-दूसरे के बीच भय की भावना उत्पन्न कर दी। इस प्रकार युद्ध के बाद विश्व का द्वि-ध्रुवीय चरण आरम्भ हो गया। अमेरिका और सोवियत संघ दो विरोधी ध्रुव बने जिनके इर्द-गिर्द यूरोपीय राजनीति घूमने लगी। जहां पश्चिमी यूरोप के देशों ने अमेरिका का साथ दिया और स्वयं को मुक्त विश्व की संज्ञा दी वहीं दूसरी ओर पूर्वी यूरोप के देश सोवियत संघ के नेतृत्व वाले समाजवादी शिविर का हिस्सा बन गए। अमेरिका और सोवियत संघ दो महाशक्तियों के नाम से विख्यात हो गए।

> ''महाशक्ति'' शब्द बड़ी शक्तियों से अलग है। जहां पर विश्व ने केवल दो देशों, प्राचीन सोवियत संघ और अमेरिका को महाशक्तियों के रूप में पहचान दी, वहीं यूरोप के इतिहास में ऑस्ट्रिया, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी आदि देश बड़ी शक्तियों के नाम से जाने जाते हैं। महाशक्तियों के पास अपनी अलग इतनी सैन्य क्षमता और आर्थिक संसाधन होते हैं जो शेष संसार के अन्य देशों से कहीं अधिक होते हैं। नाभिकीय और अन्य विनाशकारी अस्त्रों के कारण वे संसार के अन्य भागों और दूसरे देशों की नीतियों को प्रभावित करने में सक्षम थे।

पूर्वी और पश्चिमी देशों के बीच कभी भी अच्छे संबंध नहीं थे। प्रत्यक्ष युद्ध में आए बिना ये दोनों दल राजनैतिक और सैन्य प्रतिस्पर्धा में लगे रहे। इस स्थिति को शीतयुद्ध के नाम से जाना गया। इस शीतयुद्ध को कुछ प्रतिस्पर्धाओं से चिह्नित किया गया जैसे कि सैन्य दल बनाना, उदाहरण के लिए नॉर्थ अटलांटिक ट्रिटी ऑर्गेनाइजेशन (नेटो) तथा वारसा ट्रिटी ऑर्गेनाइजेशन और नाभिकीय हथियारों की होड़। नैटो की स्थापना 1949 में की गई, जिसमें अमेरिका और कनाडा तथा पश्चिमी यूरोप के दस देश बेल्जियम, ब्रिटेन, नीदरलैंड, पश्चिमी, जर्मनी इत्यादि शामिल थे। इन नैटो सदस्यों ने गुट बनाकर यह समझौता किया कि उनमें से किसी भी देश के विरुद्ध आक्रमण करने वाले देश के विरुद्ध ये सभी मिलकर मुकाबला करेंगे। सोवियत संघ ने बड़ी चालाकी से इस गुट में शामिल होने की पेशकश की। परंतु नैटो ने उसकी इस पेशकश को ठुकरा दिया क्योंकि इसका वास्तविक उद्देश्य तो सोवियत संघ के प्रभाव और सिद्धांत को फैलने से रोकना ही था। सोवियत संघ ने 1955 में नैटों के विरोध में सैन्य समूह वर्साय संधि संगठन बनाया जिसमें पूर्वी यूरोप के देश शामिल थे। विरोधी सैन्य समूह शीघ्र ही शीत युद्ध के प्रतिद्वंद्वी ये दोनों देश समझ गए कि दोनों ही नाभिकीय युद्ध में एक-दूसरे को अनेक बार नष्ट कर सकते थे। इन खतरों के कारण ही द्विपक्षीय संबंधों को एक नई दिशा प्राप्त हुई। एक ओर शिविर पश्चिमी एशिया, दक्षिण-पूर्वी एशिया और केन्द्रीय अमेरिका तथा दक्षिण अफ्रीका के स्थानीय संघर्षों में ये उलझ गए। इसके परिणामस्वरूप एक बड़ी सैन्य सहायता नये मित्र राष्ट्रों को भेजी जाने लगी। इसके साथ ही नाभिकीय अस्त्रों के प्रसार और प्रयोग पर रोक लगाने का भी इन देशों द्वारा 1960 के दशक में प्रयास किया गया। द्विध्रुवीय विश्व व्यवस्था के कुछ अच्छे प्रभाव भी थे। सबसे पहले तो यूरोपीय उपनिवेशों में स्वतंत्रता आंदोलन में अफ्रीका और एशिया के देशों में तेजी आई। शीत युद्ध के दोनों ही गुटों ने उन देशों के लोगों की सद्भावना प्राप्त करने के लिए उन्हें प्रोत्साहन दिया। 1960 से लगभग 100 नये देश बने। ये देश अपनी इस नई राजनैतिक स्वतंत्रता को सैन्य गुटों में शामिल होकर नहीं खोना चाहते थे। अत: उन्होंने गुट निरपेक्ष आंदोलन प्रारम्भ किया जिनका उददेश्य विश्व शांति, नाभिकीय नि:शस्त्रीकरण और निर्धन देशों की आर्थिक उन्नति पर बल देना था। इस प्रयास में भारत ने अग्रणी भूमिका निभायी। इन देशों की सामूहिक आवाज़ और उसका प्रभाव विश्व संगठनों जैसे संयुक्त राष्ट्र में भी सुनाई दी। महाशक्तियों से नि:शस्त्रीकरण और उचित तथा एक समान आर्थिक व्यवस्था गबनाने के लिए कई बार पहल की गई। इसी के साथ-साथ तेल एवं खनिज संपन्न देशों ने (पश्चिमी एशिया और अन्य) बुद्धिमानी से तेल के उत्पादन और कीमतों में वृद्धि करके अपनी महत्ता सुनिश्चित की।

1970 के दशक से द्विध्रुवीय विश्व बहुध्रुवीय विश्व में बदलने लगा। विद्वानों और राजनीतिज्ञों ने अब केवल दो नहीं बल्कि विश्व मामलों में शक्ति और प्रभाव के कई केन्द्रों की उपस्थिति को स्वीकार किया। तृतीय विश्व की सामूहिक तोल-मोल की शक्ति के अलावा कई और भी विकास हुए। अमेरिका द्वारा आर्थिक और सैन्य सुरक्षा प्राप्त करने के बाद पश्चिमी यूरोपीय देश एक क्षेत्रीय एकीकरण प्रक्रिया का हिस्सा बने और इसे यूरोपीय संघ के नाम से जाना जाता है। ये देश, अमेरिका के विश्व व्यापार में मुख्य प्रतिद्वंद्वी बन गए। पूर्वी एशिया में भी पहले जापान और फिर चीन की आर्थिक उन्नति के बाद अन्य एशियाई देशों जैसे दक्षिणी कोरिया, सिंगापुर आदि ने भी द्विध्रुवीय विश्व व्यवस्था की पकड़ को कमजोर कर दिया। रोचक बात यह है कि द्विध्रुवीय शक्तियों ने इन नए ध्रुवों से प्राप्त चुनौती के साथ सामंजस्य बिठाने का प्रयास किया जिसे **तनाव शैथिल्स** के नाम से जाना जाता है। परंतु वे इसे कायम रखने में विफल हो गए। द्विध्रुवीय विश्व व्यवस्था तब तक चलती रही जब तक कि पूर्वी यूरोप और सोवियत संघ में समाजवाद का अप्रत्याशित अंत न हुआ जिसने 1990 के प्रारम्भ तक शीत युद्ध का अंत हो गया।

पाठगत प्रश्न 29.2

(क) द्वितीय विश्व युद्ध में विजयी देशों के नाम लिखिए।

(ख) क्या यह सत्य है कि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यूरोप का महत्व कम हो गया था?

(ग) कौन से दो देश महाशक्ति के नाम से जाने जाते थे?

(घ) शीतयुद्ध के समय कौन से दो सैन्य गुट बने।

(ङ) महाशक्तियों ने क्या सामंजस्य बिठाने का प्रयास किया? इस प्रक्रिया को क्या नाम दिया गया?

29.3 शीत युद्ध के बाद एक ध्रुवीय विश्व

बर्लिन दीवार के ढह जाने और जर्मनी के एकीकरण के बाद यूरोप में विस्मयकारी विकासों की एक प्रक्रिया आरम्भ हुई। पोलैंड, हंगरी, बुल्गारिया और अन्य देशों के नागरिकों की बड़ी भीड़ इन समाजवादी तानाशाहों के विरोध में उठी और शासन ताश के पत्तों की भांति ढह गए क्योंकि तत्कालीन मिखाईल गोर्बाचोव के नेतृत्व में सोवियत संघ सैन्य हस्तक्षेप करने को अनिच्छुक था। शीघ्र ही स्वतंत्रता की बलवती इच्छा ने समाजवादी शिविर के स्वामित्व को हिलाकर रख दिया। 1991 में सोवियत संघ, रूस संघ और 14 अन्य देशों में विभाजित हो गया। नैटो अमीर भी है और युगोस्लाविया तथा अफगानिस्तान में कार्यरत है, जो इन देशों ने समाजवाद छोड़ प्रजातंत्र और मुक्त व्यापार अर्थव्यवस्था की विचारधारा को अपनाया। इसे अमेरिका की शानदार विजय माना गया। अब जबकि वारसा ट्रिटी ऑर्गेनाइजेशन विघटित हो चुका है इसकी मूल रूप से योजना में नहीं था।

शीतयुद्ध में विजय के साथ ही अमेरिका प्रशंसा और भय का पात्र बन गया। समाजवाद के अंत और सोवियत संघ के विघटन के बाद अमेरिका एक अकेली महाशक्ति रह गया। अमेरिका के प्रभुत्व को वर्णित करने के लिए केवल एक क्षेत्र के बारे में कहना पर्याप्त होगा अस्त्र निर्यात। यद्यपि अस्त्रों का निर्यात शीत युद्ध के बाद लगभग आधा हो गया है, परंतु अमेरिका की हिस्सेदारी अब भी प्रभुत्वपूर्ण है, जो पूरे अस्त्र निर्यात मूल्य का लगभग दो-तिहाई है।

शीतयुद्ध की समाप्ति के 15 वर्षों के बाद के एक देश के प्रभुत्व को एक ध्रुवीय व्यवस्था के नाम से बहुत विद्वान वर्णित करते हैं। इस ऊंचाई में अमेरिका को शीर्ष से हटाने की चुनौती कोई नहीं दे सकता।

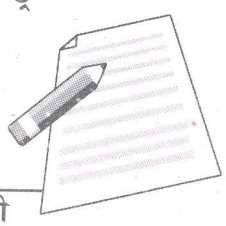

पुराना शत्रु सोवियत संघ अब उसका एक साथी है जो कि शस्त्र नियंत्रण, अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा, क्षेत्रीय संघर्षो के समाधान, व्यापार और निवेश में अमेरिका का हिस्सेदार है (कभी-कभी तनाव होने के बावजूद यूरोप की शक्ति अमेरिका के लिए कोई चुनौती नहीं है) शीतयुद्ध की समाप्ति के पहले ही समाजवादी ढाँचे को त्यागने के बाद चीन ने भव्य आर्थिक उन्नति की है परंतु अमेरिकी शक्ति की तुलना में सापेक्ष इसकी कुछ सीमाएँ हैं। गुट निरपेक्ष आंदोलन का प्रभाव कम हो गया है। विदेशी निवेशकों को आकर्षित करने के लिए अर्थ व्यवस्थाओं को उदार बनाया गया। अमेरिका के हथियार के रूप में इंटरनेशनल मोनेट्री फन्ड की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण रही है जिसने इन देशों की अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया है।

नई शक्ति की व्यवस्था की वास्तविकताएं ठीक ढंग से संयुक्त राष्ट्र के कार्यों में परिलक्षित होती हैं। संयुक्त राष्ट्र वह संस्था है जो न्याय पर आधारित विश्वक्रम और गणतंत्र के लिए कार्य करती है। संयुक्त राष्ट्र ने शांति और सुरक्षा बहाल करने में जागरूक व्यवस्था की भूमिका निभानी प्रारम्भ की। शांति और सुरक्षा से संबंधित इसका मुख्य अंग सुरक्षा परिषद जिसमें पहले दोनों महाशक्तियों के बीच अकसर असहमति होती थी, अब अमेरिका के लिए सक्रिय एजेन्ट के रूप में बदल चुका है जबकि अन्य स्थायी सदस्य या तो उसके साथ मिल गए हैं या निष्क्रिय हैं। संयुक्त राष्ट्र की पारदर्शिता और प्रजातांत्रिक कार्य प्रणाली को आघात लगा। प्रथम खाड़ी युद्ध के दौरान संयुक्त राष्ट्र की भूमिका को इस नई परम्परा का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण माना जा सकता है। लगभग एक दशक के बाद संयुक्त राष्ट्र की परवाह किए बिना अधीर अमेरिका ने 2003 में एक तरफा ईराक पर आक्रमण कर दिया। महासभा और महासचिव की कार्य प्रणाली अमेरिका के इस अड़ियल रवैये से आहत हुई।

पाठगत प्रश्न 29.3

(1) शीतयुद्ध में किस देश की हार हुई?

(2) शीतयुद्ध के अंत के बाद कौन-सा देश सर्वशक्तिमान बनकर उभरा?

(3) शीतयुद्ध के अंत की घोषणा के समय सोवियत संघ के नेता का नाम लिखिए।

(4) ध्रुवीय विश्व के अविर्भाव ने संयुक्त राष्ट्र की कार्य प्रणाली में कैसे सहायता की?

29.4 एक ध्रुवीय स्थायित्व

यह खेदजनक है कि शांति और स्थायित्व इस विश्व में एक ध्रुवीय नहीं रह सकते। शीतयुद्ध के बाद के समय का एक मुख्य लक्षण राष्ट्र, राज्य के लिए चुनौतियों का बढ़ जाना था जैसा कि द्विध्रुवीय समय में नहीं था जब राष्ट्रों को आंतरिक और बाह्य शक्तियों से अपने अस्तित्व का खतरा था। 1990 से पहले देश की क्षेत्रीय एकता को स्थायित्व के लिए आवश्यक माना जाता था। सोवियत संघ के विघटन ने जातीय, भाषाई और धार्मिक पहचान के आधार पर अलग राज्य की मांग करने को प्रोत्साहन दिया। गुटनिरपेक्ष आंदोलन के जनक राष्ट्रों में से यूगोस्लाविया एक कटु प्रक्रिया के बाद पांच हिस्सों में टूट गया और क्रोशिया, बोस्निया, हर्जगोविना को जातीय आधार पर और विघटन की गंभीर चेतावनी झेलनी पड़ी। इसके बाद चेकोस्लोवाकिया दो हिस्सों में विभक्त हुआ। स्व-निर्धारण के अधिकार के कारण एक लंबे संघर्ष के बाद इरीट्रिया ने इथिओपिया से स्वतंत्रता प्राप्त की। यद्यपि सीमा समस्या ने दोनों निर्धन देशों के ऊपर नए युद्ध का बोझ लाद दिया है। पूर्वी तिमोर इस सूची

में बिल्कुल नवीनतम है जिसने स्व-निर्धारण अधिकार का दावा हिंसात्मक रूप से किया। कोई भी नहीं कह सकता था कि बदतर स्थिति का अंत हो चुका है।

> स्व-निर्धारण के अधिकार का उद्देश्य किसी जनसंख्या को जो विदेशी ताकतों के अधीन हैं उन्हें स्वेच्छा से अपनी सरकार चुनने का अधिकार प्रदान करना है। 18वीं सदी में अमेरिकी स्वतंत्रता के युद्ध और फ्रांसीसी क्रांति ने इस विचारधारा को प्रोत्साहन दिया। प्रथम विश्व युद्ध के बाद मध्य यूरोप के कुछ नए राज्य जैसे आस्ट्रिया, यूगोस्लाविया आदि ने भी स्व-निर्धारण के अधिकार को अपनाया। 1945 के बाद अफ्रीका, एशिया और कैरीबियन के उपनिवेशियों ने अपने उपनिवेशी स्वामियों से स्वतंत्रता प्राप्ति और स्वनिर्धारण अधिकार की मांग की। हाल ही में कुछ असंतुष्ट समुदाय (जैसे कश्मीर में) अपने आपको वर्तमान राज्य से अलग एक स्वतंत्र राज्य और स्व-निर्धारण अधिकार की मांग कर रहे हैं। यह एक व्यापक भय है कि इस प्रकार की मांगों को स्वीकार करने पर कई देश जातीय, भाषा और धार्मिकता के आधार पर विभाजित हो जाएंगे। यह सब समकालीन विश्व व्यवस्था के लिए एक खतरा हो सकता है।

कई देशों के शासन ऐसे एक या अधिक विद्रोही समूहों से गृह युद्ध लड़ रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप राज्य मशीनरी ने कार्य करना बंद कर दिया है। अफगानिस्तान, अंगोला, बुरुंडी, कोंगो, लाइबेरिया, सीयरा लिओन, सोमालिया आदि इस प्रकार के अस्थायित्व के शिकार हैं। उनमें से कुछ को विफल राष्ट्र की संज्ञा दी गई है, जो शेष संसार के लिए चिंता का विषय है। साथ ही कुछ देशों को बाहरी देशों से सैन्य हस्तक्षेप की चेतावनी मिलती रहती है। यूरोप में जॉर्जिया और अफ्रीका में जैरे इसके उदाहरण हैं।

गृह युद्ध बहुत ही नृशंस और अनैतिक तरीके से लड़े जा रहे हैं। छोटे हथियारों, हैंड ग्रेनेड, और बारूदी सुरंगों के फटने की घटनाएं हो रही हैं जिन्होंने लाखों बेकसूर पुरुष, महिलाओं और बच्चों को दयनीय बना दिया है। पिछले 15 वर्षों में इस प्रकार के टकरावों में 20 लाख लोग मारे जा चुके हैं। अनुमानतः सौ में से 95 लोग जो इस प्रकार मारे गये वे निर्दोष थे। जातीय रूप से अल्पसंख्यकों को शहर से मारकर खत्म करना, बच्चों को बलपूर्वक सैनिक बनाना, महिलाओं के साथ सामूहिक बलात्कार आदि की घटनाएं इन गृह युद्धों के लक्षण हैं। शीत युद्ध के बाद विश्व व्यवस्था के लिए सुरक्षा और स्थायित्व को एक आवश्यक घटक मानने वालों के लिए मानवाधिकार महत्वपूर्ण हो गया है। राष्ट्र सुरक्षा की जगह अब मानव सुरक्षा ने ले लिया है।

दूसरी ओर कुछ देशों को यह डर है कि मानवाधिकारों का प्रयोग विदेशी सेनाओं के हस्तक्षेप के लिए एक बहाने की तरह प्रयोग किया जा सकता है। 2003 में अमेरिका ने ईराक पर आक्रमण करके उस पर यह कहकर अधिकार कर लिया कि सद्दाम हुसैन के शासन में शिया और अन्य ईराकी लोगों पर प्राणघाती हथियारों का प्रयोग किया। बहुत-से देशों ने अमेरिका पर आरोप लगाया कि अमेरिका ने मानवाधिकारों की आड़ में अपने स्वार्थों को पूरा करने के लिए अनुचित और गैर-कानूनी कार्य किया है। विडंबना यह है कि हजारों अमेरिकी और ईराकी अपना जीवन खो चुके हैं, खो रहे हैं- क्योंकि अमेरिका और उसके गुट के तथा ईराक की प्रतिरोधी सेना में युद्ध अब भी जारी है। यह डर है कि ईराक पर हमला करना अमेरिका की उसकी वियतनाम के हाथों में हुई हार की तुलना में सबसे बड़ी भूल है। दूसरे कारणों में धार्मिक अहसनशीलता की समकालीन विश्व व्यवस्था में अस्थायित्व में योगदान दे रही है। हालांकि धार्मिक कट्टरता को सामान्यतः इस्लाम के साथ जोड़ा जाता है। यह सत्य नहीं है कि यह कट्टरता केवल एक ही धर्म में है। इनमें से कई समूहों को राष्ट्रीय सीमाओं से बाहर से भी सैन्य हथियारों और आर्थिक मदद प्राप्त होती है। इस नेटवर्क को माफियाओं से संबंधित और अवैध तस्करी तथा हथियारों की सौदेबाजी आदि से संबंधित होना कहा जाता है। दूसरे शब्दों में कई देशों की आंतरिक अव्यवस्था की जड़ें दूसरे देशों में हैं।

इन्हीं सबंधों के कारण अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद न केवल एक राष्ट्र बल्कि संपूर्ण विश्व क्रम की सुरक्षा के लिए एक खतरा बन गया है। ओसामा बिन लादेन के नेतृत्व वाला अलकायदा सबसे अधिक भयभीत करने

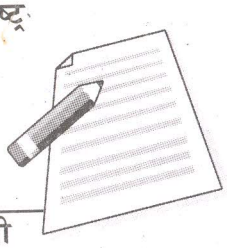

टिप्पणी

वाला आतंकवादी संगठन है। हम सभी जानते हैं कि 11 सितंबर 2001 में किस प्रकार ओसामा बिन लादेन के अनुयायियों ने एक योजना बनाकर न्यूयॉर्क के वर्ल्ड ट्रेड सैन्टर पर संगठित आक्रमण किया और अमेरिका के अन्य स्थानों पर हालांकि आतंकवाद का संकट 11 सितम्बर 2001 से पहले ही अस्तित्व में आ चुका था परंतु इस घटना को टेलीविजन स्क्रीन पर देखकर यह लगने लगा कि किस प्रकार विश्व की सबसे बड़ी शक्ति को ओसामा ने कंपित किया। दक्षिण एशिया में भारत और श्रीलंका एक दशक से भी पहले से इस आतंकवाद से लड़ रहे हैं और यह आतंकवाद अब दक्षिण एशिया के अन्य देशों जैसे बांग्लादेश, नेपाल और पाकिस्तान में, दक्षिण-पूर्वी एशिया के मलेशिया और इंडोनेशिया, पश्चिमी एशिया के लेबनान और मिस्र तथा अफ्रीका के कीनिया, सोमालिया और सूडान में फैल चुका है। सितम्बर 2004 की एक दहशतपूर्ण घटना में चेचन्या संबंधित एक आतंकवादी संगठन ने दक्षिणी रूस के एक स्कूल पर कब्जा कर लिया और रूसी कमांडो के साथ एक दुर्भाग्यपूर्ण मुकाबले में 350 छोटे-छोटे स्कूली बच्चों की मृत्यु हो गई। संक्षेप में अस्थायित्व के इन पहलुओं को कई तरह से देखने की आवश्यकता की ओर संकेत करते है। सुरक्षा का दायरा बढ़ चुका है; इसमें अब केवल विदेशी आक्रमणों की ही अनुपस्थिति शामिल होना नहीं है बल्कि आतंरिक सुरक्षा भी शामिल है। सुरक्षा का अर्थ केवल राज्य की सुरक्षा हेतु एक मजबूत सेना तैयार करना ही नहीं है; इनमें लोगों की आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरण संबंधी हित भी निहित है। इसके अतिरिक्त, आतंकवाद सहित इन समस्याओं पर किसी एक राज्य द्वारा काबू नहीं पाया जा सकता परंतु सभी राष्ट्रों को एकजुट होकर इसका सामना करना होगा।

पाठगत प्रश्न 29.4

(क) क्या एक ध्रुवीय युग ने विश्व क्रम में स्थायित्व पैदा किया?

(ख) विभाजित होने वाले देशों के नाम लिखिए।

(ग) गृह युद्ध झेल रहे देशों के कुछ उदाहरण दीजिए।

(घ) युद्धों और हिंसाओं में निर्दोष जनता अप्रभावित रही। (सत्य या असत्य)

29.5 वैश्वीकरण के अच्छे और बुरे प्रभाव

नि:संदेह, 21वीं सदी का विश्व वैश्वीकरण की राह पर है जिसका मुख्य उद्देश्य आर्थिक है, यद्यपि इसके कुछ अन्य सांस्कृतिक और राजनैतिक आयाम भी हैं। 1990 के दौरान शीतयुद्ध के बाद निजीकरण और उदारीकरण को माना गया कि ये ही आर्थिक और वाणिज्यिक लेन-देन में महत्वपूर्ण बदलाव करके विकास का पथ प्रशस्त करते हैं। कुछ अन्य विकास ऐसे भी थे जिन्होंने वैश्वीकरण को बढ़ाने में योगदान दिया। सूचना और संचार तकनीक के विकास जो कि कम्प्यूटर से जुड़े हैं, ने इलैक्ट्रॉनिक युग की शुरुआत की। विश्व के आर्थिक संस्थानों जैसे कि इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड और विश्व बैंक जिनकी शक्ति अब वैश्विक बन चुकी हैं, इनके साथ उतनी ही शक्तिशाली एक और संस्था भी मुक्त व्यापार को प्रोत्साहन देने के लिए कार्य करती है। यह विश्व व्यापार संगठन है। संपूर्ण विश्व आज एक ऐसा बाजार बन चुका है जिसमें विदेशी निवेशकों और राष्ट्रीय सीमाओं के आर-पार सामानों की मुक्त आवाजाही की अनुमति दी जाती है। इस बदली हुई परिस्थिति में बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने वैश्विक सम्मान और श्रेष्ठता प्राप्त किया है।

वैश्वीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य संसार को एक बाजार बनाने का है और बिना किसी रोक-टोक के पूंजी, सामान, सूचना और यहां तक कि श्रमिक भी सीमाओं के आर-पार आसानी से आ-जा सके। ये निजी कंपनियाँ अपनी इच्छा से निवेश, संस्थान के लिए लाभदाय स्थान का चुनाव, कर्मचारियों की नियुक्ति, आवश्यक अनुभव और कुशलता वाले लोगों को काम देना, विकसित देशों में अपने उपभोक्ता

सामान को बहुतायत में भेजना, जो कि स्थानीय सामनों से कम कीमत की स्पर्धा रखते हों, और आसानी से लाभ प्राप्त करना, आदि कर सकते हैं। यह सब आसान तकनीक की उपलब्धि के कारण संभव हो सका है। जो कि विश्व स्तर पर सबके लिए समान रुप से उपलब्ध नहीं है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया, जैसा कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों के कार्यकलापों से स्पष्ट है, तथा मीडिया और अन्य गैर सरकारी संस्थाओं ने स्पष्ट कर दिया है कि तृतीय विश्व में राज्य संरचना को प्राप्त प्रभुत्व को बहुत हद तक प्रभावित किया है। क्षेत्रीय सीमाएं वैश्वीकरण के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने में कम प्रभावशाली रही हैं।

विश्व समुदायों की बहुतायत, विकासशील प्रत्याशा वैश्वीकरण का हिस्सा बन गए। हमें भारत के अनुभव पर नजर डालनी चाहिए। सुविकसित और उच्च प्रतिस्पर्धा की सॉफ्टवेयर औद्योगिक तकनीक, कुशल कार्यक्षमता की उपलब्धि और एक बड़ी मध्यमवर्गीय बाजार होने के कारण भारत को वैश्वीकरण से बहुत आशाएं हैं। 1991 से भारत ने अपनी आर्थिक नीति को निजीकरण के गुणों को अपनाकर, विदेशी निवेश के प्रति उदार नियम बनाकर और पब्लिक सैक्टर कंपनियों के निवेश को बंद करके परिवर्तित किया है। उपभोक्ताओं के पास बाजार में वस्तुओं के चुनाव की बहुत-सी संभावनाएं हैं जो कि मोटर कार से लेकर खाद्य पदार्थों तक हैं। भारतीय निर्यात विशेषकर सेवा क्षेत्र में बढ़ा है, देश में निवेश भी बढ़ा है, और हमारे विदेशी मुद्रा भंडार भी प्रचुरमात्र में हैं। सम्पूर्ण रूप से वैश्वीकरण के दौरान भारत एक सबसे तेज वृद्धि दर वाली अर्थव्यवस्था बनकर उभरा है। यद्यपि भारत वैश्वीकरण के लाभकारी पक्षों के लिए खुला है। अमेरिकी कंपनियां, मुद्रा, टीवी चैनलों और हथियार संसार पर छा गए हैं। सरकार द्वारा उर्वरकों, बिजली और अन्य आवश्यक जरूरतों में सहायता न देने से ग्रामीण और कृषि क्षेत्र की समस्याएं और अधिक हो गई हैं। देशों के अंदर अमीर और गरीब की आय में अंतर तेजी से बढ़ता गया है। संसार की लगभग आधी जनसंख्या (जो अबसहारा, अफ्रीका और दक्षिण एशिया में केन्द्रीत है) बहुत गरीबी में है। जहां सम्पन्न देशों द्वारा दिया गया दान बढ़ा नहीं है, वहीं विकासशील देशों पर कर्ज, का बोझ अधिक बढ़ गया है। दूसरी ओर संसार के सबसे बड़े खरबपतियों को पूंजी सबसे कम विकसित देशों को राष्ट्रीय संपत्तियों को एक साथ मिलाकर भी उनसे अधिक है। विकसित देशों में इन निम्नतम विकसित देशों का सामान प्राथमिकता नहीं पाता। इसके अतिरिक्त हमारी जीवनशैली निरर्थक उपभोक्तावाद की तरफ तेजी से बढ़ रही है। वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप एड्स जैसी बीमारियों के फैलने से एक साथ डरकर रह रहे हैं। इन सभी समस्याओं के समाधान के लिए किए गए सभी प्रयास अपर्याप्त रहे हैं। वैश्वीकरण को अब उचित साबित करने के लिए इसे मानवीय रूप देने की आवश्यकता है। अन्यथा समकालीन विश्वव्यवस्था की विश्वसनीयता पर प्रश्न चिह्न लग सकता है।

पाठगत प्रश्न 29.5

(क) वैश्वीकरण केवल आर्थिक क्षेत्र तक ही सीमित है। (सत्य / असत्य)

(ख) पश्चिम की निजी कंपनियां वैश्वीकरण से सबसे अधिक लाभान्वित हुई हैं। (सत्य / असत्य)

(ग) सूचना और संचार प्रौद्योगिकी में क्रांति के बाद वैश्वीकरण को बल मिला है। (सत्य / असत्य)

(घ) देशों के अंदर और उनके बीच आय का अंतर बढ़ा है। (हाँ / नहीं)

आपने क्या सीखा

बहुजातीय राष्ट्र जो आकार और क्षमताओं में भिन्न होते हैं उन्होंने एक बड़ी विश्व व्यवस्था का निर्माण किया है। कुछ शक्तिशाली देशों ने विश्व व्यवस्था को आकार देने में कुछ निश्चित नियमों और सिद्धांतों को बनाकर बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। पिछली सदी से, शांति और विकास विश्व व्यवस्था के सबसे

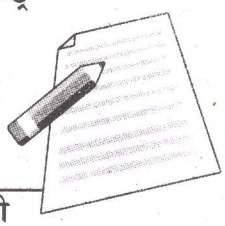

महत्वपूर्ण उद्देश्य बन गए हैं। परंतु शीतयुद्ध का इस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। 1945-90 के दौरान लगभग आधी सदी तक द्विध्रुवीय विश्व का प्रभाव दिखा हालांकि इसी बीच बहुध्रुवीय व्यवस्था भी पनपने लगी। शीत युद्ध के अंत और अमेरिका के सबसे शक्तिशाली देश के रूप में उभरने से विश्व एक ध्रुवीय बन गया। विश्व व्यवस्था में इस बदलाव ने कुछ समस्याएं उत्पन्न कर दीं जैसे कि संसार के विभिन्न भागों में राजनैतिक अस्थिरता उत्पन्न हो गई। आर्थिक वैश्वीकरण संसार को एक आंधी की तरह अपनी जकड़ में ले लिया है, उससे लोगों और देशों के बीच आय में अंतर बढ़ा है।

पाठांत प्रश्न

1. विश्व व्यवस्था का अर्थ और मौलिक लक्षण लिखिए।
2. अमेरिका और सोवियत संघ ने शीत युद्ध किस प्रकार लड़ा?
3. द्विध्रुवीय विश्व किस प्रकार धीरे-धीरे बहुध्रुवीय बना?
4. एकध्रुवीय संसार के लक्षण में गृह युद्ध और आतंकवाद का वर्णन कीजिए।
5. वैश्वीकरण के बुरे प्रभावों पर प्रकाश डालिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

29.1

(क) राज्य जिन्हें देशों के नाम से जाना जाता है।

(ख) नहीं।

29.2

(क) अमेरिका, सोवियत संघ और ग्रेट ब्रिटेन

(ख) हाँ।

(ग) अमेरिका और तत्कालीन सोवियत संघ।

(घ) नाटो तथा वारसा संधि संगठन।

(ङ) हाँ, इसे 'तनाव शैथिल्य' नाम दिया गया।

29.3

(क) सोवियत संघ

(ख) अमेरिका

(ग) मिखाइल गोर्बाचोव

(घ) नहीं

29.4

(क) हाँ

(ख) यूगोस्लाविया, चैकोस्लोवाकिया आदि।

(ग) अफ़गानिस्तान, सोमालिया, सीयरा लिओन, यूगोस्लाविया आदि।

(घ) असत्य

29.5

(क) असत्य

(ख) सत्य

(ग) सत्य

(घ) हाँ

पाठांत प्रश्नों के संकेत

1. खण्ड 29.1 देखें
2. खण्ड 29.2 देखें
3. खण्ड 29.2 देखें
4. खण्ड 29.4 देखें
5. खण्ड 29.5 देखें